अध्याय - 2
2.1 - छत्तीसगढ़ जातियाँ एवं समाज

सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टिकोण से छत्तीसगढ़ क्षेत्र के निवासियों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम वर्ग उन मूलनिवासी आदिवासीयों का है जो इस क्षेत्र के जंगलों में आज भी आदिम अवस्था में है, और आदिम संस्कृति के अवशेषों को सुरक्षित रखे हुए हैं। यही आदिम जनजातियां छत्तीसगढ़ की मूल निवासी है यद्यपि कई जनजातियाँ वर्तमान में शिक्षीत और सभ्य हो कर छत्तीसगढ़ के विकास में अपना योगदान दे रहे हैं। दूसरा वर्ग उन सवर्ण और पिछड़ी हुई जातियों का है जो अलग-अलग समय पर यहाँ आई और यहाँ के संस्कृति में रच बस गईतीसरा वर्ग उन लोगों का है जो विभिन्न धर्मो के प्रभाव में आकर हिन्दू समाज से पृथक हो गये तथा नए सम्प्रदायों के नाम से जाने जाते रहे हैं।[(1)]

छत्तीसगढ़ अंचल में आदिम जनजातियों में जनसंख्या के बाद अनुसूचित जाति वर्ग का स्थान आता है। सतनाम पंथ के स्थापक गुरू घासीदास ने 18वीं शताब्दी में यहाँ की पिछड़ी जाती का उद्धार कर उन्हें अन्य जातियों के समकक्ष लाने में उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। कबीर पंथी सम्प्रदाय मूलतः पिछड़े वर्ग के लोगों में विशेष लाकप्रिय रहा है। मराठा शासन काल में यहाँ मराठों का आगमन हुआ उनके साथ वहाँ की अनेक जातिया भी छत्तीसगढ़ आई और यहाँ की संस्कृति में घूल मिल गई इनकी अनेक जातियाँ एवं उपजातियाँ यहाँ आज भी निवास रत है। ब्रिटिश शासन काल में इसाई मिशनरियों का आगमन होने के कारण यहाँ के निवासीयों को प्रर्याप्त संख्या में इसाई बनने का अवसर मिला। विशेष कर सरगूजा, जशपुर, कोरिया, क्षेत्र के आदिवासीयों ने सहजता से इस धर्म को स्विकार कर लिया जिनके वंशज आज भी इस धर्म का प्रचार प्रसार कर रहे हैं। सिक्ख सम्प्रदाय के लोग भी छत्तीसगढ़ में व्यापार के उद्देश्य से आये थे और कालांतर में यहाँ के निवासी बन गये। इसी प्रकार मुस्लिम सम्प्रदाय भी व्यापार के उद्देश्य से छत्तीसगढ़ में आये और यहाँ के निवासी बन गये। इस प्रकार छत्तीसगढ़ में विभिन्न जातियों का समय-समय पर आगमन हुआ और यहाँ का शांत वातावरण देखकर यहाँ की संस्कृति मे रच बस गये। ब्राह्मण जाति भी कई हजार वर्ष पूर्व छत्तीसगढ़ आई होगी।

जो अपने खान-पान रहन-सहन मे अपनी मूल जाति से भिन्न और विशिष्ट दिखाई पड़ती है। इसी प्रकार विभिन्न जातियाँ जो कालांतर में यहा आई है अपनी मूल जाति से भिन्न दिखाई देती है। इसका कारण है छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक विशेषता। छत्तीसगढ़ की संस्कृति में सामाजिक समरसता का आदर्श दिखाई पड़ता है। और यह परंपरा सदियों से चला आ रहा है और यह क्रम अनवरत जारी है।(2) वर्तमान में छत्तीसगढ़ के समाज में अनेक जातियाँ है, जिसमें प्रमुख ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, पिछड़ी जातियॉ एवं जनजातियॉ है :-

ब्राह्मण :- वर्ण के आधार पर व्यवस्थित समाज में ब्राह्मणों का स्थान सबसे ऊँचा था। ब्राह्मणों को समाज में आदर की दृष्टि से देखा जाता था। वर्तमान छत्तीसगढ़ में ब्राह्मणों की विभिन्न जातियाँ निवासरत है।(3)

सतनामी :- छत्तीसगढ़ की जनसंख्या में सबसे बड़ी संख्या गोड़ों की है। इसके पश्चात जनसंख्या में सतनामी जाति है। सतनामी हिन्दु नही कहलाते यद्यपि सतनामी हिन्दू देवी देवताओं के उपासक है। सतनामी जाति बड़ी सुडौल और खूबसूरत होती है। सतनामी वस्तुतः हरिजन है। ये जाति सतनाम पंथ को मानती है।(4)

तेली :- छत्तीसगढ़ में सतनामियों के बाद तेली जाति के लोगों की संख्या अधिक है। इनका प्रमुख कार्य तेल बेचना था। परंतु वर्तमान में ये अन्य व्यवसाय और कृषि कार्य करते हैं। छत्तीसगढ़ में चार रियासतों में तेली अधिक थे। ये रियासत हैं- राजनांदगांव, खैरागढ़, छुईखदान, और कवर्धा। तेली जाति के लोग कबीर पंथ को मानने वाले होते हैं।(5)

कुर्मी-लोधी :- ये दोनों जातियाँ भी छत्तीसगढ़ में निवासरत है। ये जातिया कृषि कार्य के लिए प्रसिद्ध है। ये कृषि कार्य को सबसे उत्तम कार्य मानते हैं।(6)

केंवट :- केंवट (मछुआरा) जाति के लोगों को प्रमुख व्यवसाय मछली पकड़ना था। परंतु धीरे-धीरे केंवट जाति का यह परम्परागत व्यवसाय लुप्त होता गया। अब ये मुर्रा, लाई, चना, पोहा, आदि तैयार कर बेचने का कार्य करते हैं।(7)

राजपुत :- छत्तीसगढ़ में राजपुतों का निवास भी प्राचीन काल से ही रहा है। राजपुतों की संख्या नांदगांव रियासत में सर्वाधिक है। राजपुत जाति के भी कई भेद हैं- जैसे बैस, बघेल, बनाकर, परिहार, चौहान, गरवार, गौतम, नागवंशी इत्यादि।[8]

बैरागी :- बैरागी जाति के लोग भी छत्तीगढ़ के विभिनन क्षेत्रों में फैले हुए हैं। ये आदि में साधु थे और ब्रम्हचर्य का पालन करते थे। बाद में गृहस्थ बनने लगे। और ये जाति विभिन्न व्यवसायों में कार्यरत हैं।[9]

कायस्थ :- छत्तीसगढ़ के छुईखदान, कवर्धा, खैरागढ़ आदि रियासतों में कायस्थ जाति के लोग निवास करते थे। कायस्थ जाति के लोग रियासत के उच्च पदों पर कार्यरत थे।

ब्रह्म भट्ट :- जाति के लोग की संख्या छत्तीसगढ़ अंचल में अत्यंत न्यून थी। ये लोग अपने आपको ब्रह्मण कहते थे।[10]

कोष्टा :- छत्तीसगढ़ में कोष्ठा जाति का भी निवास है। इनका मुख्य कार्य कपड़ा बुनना था। परंतु कपड़ा मिलों कि स्थापना के साथ इनका परंपरागत धंधा चौपट हो गया और ये अन्य व्यवसाय में संलग्न हो गये ।

पनका :- कोष्टा के समान ही पनिका की कपड़ा बुनने वाली जाति थी। प्राय: ये कबीर पंथी होते थे। ये कपड़ा बुनने के अलावा कोटवारी का भी कार्य करते थे। पनिका जाति के कुछ लोग कृषि कार्य भी करते थे।[11]

गाड़ा :- गाड़ा जाति का प्रमुख कार्य बाजा बजाने व कोटवारी का कार्य था। शादियों में बाजा बजाने के लिए उस समय इनकी काफी मांग थी। गाड़ा लोगों का समाज में अत्यंत निम्न स्थान था।[12]

माहरा :- महार जाति के लोग भी इस अंचल में काफी संख्या में रहते हैं। ये यहाँ अनुसूचित जाति के नाम से जाने जाते हैं। इनकी कई प्रजातियाँ पाई जाति है। ये हिन्दुओं के समान त्यौहार बड़े उत्साह पूर्वक मनाते हैं।[13]

रावत (राऊत) :- रावत जाति अपने को कृष्ण वंशज बताती है। ये यदुवंशी है। रावत जाति गाय भैंस चराने के अलावा पानी पिलाने का भी कार्य करती है। रावतों में भी अनेक भेद होते हैं। देसहा, झेरिया, कनौजिया, कासरिहा दूध कंवरा, कंवरई-कुल झेरिया और ढढोक। रावतों के प्रमुख पर्व है - होली, जन्माष्टमी, दीपावली, कार्तिक, एकादशी और कार्तिक पूर्णिमा। रावत इस अंचल में अपने नृत्य के लिए प्रसिद्ध है। मड़ई या अन्य पर्वों के अवसर पर रावत नृत्य देखते ही बनता है।(14)

लोहार :- इस जाति के लोग कृषि औजार बनाने का कार्य करते हैं। बदले में इन्हें ग्रामीणों से परिश्रमिक के तौर पर अनाज और रूपया दिया जाता है।

कलार :- कलार जाति के लोगों का प्रमुख व्यवसाय मदिरा बनवाना था। इस जाति के लोग भी काफी संख्या में छत्तीसगढ़ के विभिन्न भागों में निवास करते हैं।(15)

कुम्हार :- कुम्हार जाति के लोगों का प्रमुख व्यवसाय मिट्टी के बर्तन बनाना है। कुम्हार मिट्टी से घड़े, कसेली, मकानों के छप्पर पर छाने के लिए खपरैल का निर्माण और गमले बनाने का काम करते हैं।(16)

नाई :- छत्तीसगढ़ समाज में नाई जाति का भी विशेष महत्व है। सामान्य दिनों में लोगों की हजामत बनाने का कार्य करते हैं। इसके अलावा पूजा पाठ के समय सामग्री एकत्र करने व पूजा की तैयारी में हांथ बँटाते हैं।(17)

गड़रिया :- गड़रिया जाति के लोग भेंड़ बकरियों के पालन का कार्य करते थे व भेंड़ से प्राप्त ऊन से ये कम्बल भी बनाते थे। जिसे वे गांव में ही या अन्यत्र बेंच कर अपना उदर पोषण करते थे।

इसके अतिरिक्त छत्तीसगढ़ समाज में घसिया, बरई, भाट, देवार, मरार, मुसलमान, क्रिश्चियन जाति के लोग भी निवास करते हैं।(18)

आदिवासी जाति या जनजातियाँ

विश्व में भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति प्राचीनतम रही है। यह अवधारणा भी मान्य है, कि भारत की मूल सभ्यता एवं संस्कृति द्रविड़ों की थी और यह भी सर्वजनीन है कि भारत के आदिवासी एवं अन्य जनजातियॉ मूलत: द्रविड़ प्रजाति की थी। भारत का अतीत नि:संदेह गौरवशाली था, जितना ही विशाल यह देश उतनी ही भव्य हमारी धरोहर। इस धरोहर के लिये कृत संकल्प इस प्रजाति की जितनी भी प्रशंसा की जाये कम ही होगी। अत्मिक सुंदरता एवं सरलता को बड़ी ही सहजता से अभिव्यक्त करने वाले आदिवासियों का यह कौम हमारी आत्मा का प्रहरी रहा है।(19)

विश्व इतिहास में जनजातियों अथवा आदिवासियों की जीवन शैली आधुनिक युग में अपना विशिष्ट महत्व रखती है। आदिवासियों की संस्कृति प्राचीनतम है, और इनकी अपनी चारित्रिक विशेषताएं है। ये अपनी संस्कृति की अस्मिता की रक्षा के लिए सदैव जागरूक रहे हैं। और अपनी स्थापित संस्कृति, परम्पराएँ, रीति-रिवाज, खान-पान, रहन-सहन अवधारणाओं एवं मान्यताओं को चिरकाल तक अक्षुण्ण बनाए रखना श्रेयकर समझते हैं। अंध विश्वास, जादू-टोना, बलि प्रथा यहाँ तक कि नर बलि पर भी इनका दृढ़ विश्वास रहा है।(20)

आदिवासियों की पारम्परिक एवं सांस्कृतिक विशेषताएँ आधुनिक परिवेश से सर्वथा भिन्न है। आधुनिक भौतिक वैभवों को उपलब्ध कराने की अंधा-धुंध दौड़ से वे कोसो दुर काफी कुछ प्राकृतिक एवं स्वभाविक परिवेश में ही जीवन यापन करते हैं। निष्ठा, ईमानदारी, परिश्रम और स्वंच्छदता इन्हे धरोहर में प्राप्त है। तथा इनकी संरक्षा के लिए कृत संकल्प हैं। उसके पारम्परिक रीति-रिवाज आज भी यथावत हैं। यद्यपि यह नही कि परिवर्तन का प्रभाव उन पर लेशमात्र न हुआ हो, किन्तु आधुनिकता से वे चौंक पड़ते हैं। उनका जीवन दर्शन सामान्य-जीवन शैली व जीवन दर्शन से सदियों पीछे हैं, किन्तु उन्हें असभ्य या असंस्कृत कहना समीचीन नही होगा। वे ऐसे संस्कार धानी है, जो अपने अमूल्य धरोहर को चिरंतर बनाए रखने के लिए सदैव उद्धत रहे हैं।(21)

अनेकता में एकता भारत की प्रमुख विशेषता रही है, विभिन्न प्रजातीय तत्वों का मिश्रण होने के कारण इसे प्रजातियों का अजायबघर कहा जाता है, यहाँ के वन प्रदेशों क्रम से

विभिन्न कारण वश पृथक रह गये हैं। फलत: विकास का प्रकाश वहाँ नहीं पहुँच पाया, इन दुर्गम और पृथक क्षेत्रों में निवास करने वाले मानव समुदाय सभ्यता के विकास की दृष्टि से अभी तक प्रारंभिक सोपानों पर ही है।

इन समुदायों के लोगों को विकसित लोगों ने आदिवासी जनजाति आदिम जाति, वन्य जाति, वनवासी आदि नामों से सम्बोधित किया है।[(22)]

आदिवासी जाति या जनजातियाँ :-

भारत की संस्कृति और सभ्यता में आदिवासी मानव के अति प्राचीन समय के समुदाय हैं, जो वनवासी या जनजाति के नाम से भी जाने जाते हैं। ये आज भी भारत के हर प्रदेश में पाए जाते हैं, और छत्तीसगढ़ में इनका प्रतिशत जनसंख्या 31.76% है। नवगठित छत्तीसगढ़ में इनकी अनेक प्रजातियाँ है। छत्तीसगढ़ में 88 हजार वर्ग मिलो मीटर आदिवासी बहुल क्षेत्र है।[(23)]

जनजाति की परिभाषाएँ :-

(1) जनजाति समान संस्कृति वाली जनसंख्या का स्वतंत्र राजनीतिक विभाजन है।

"लूसी मेयर"

(2) जनजाति समान नाम धारण करने वाले परिवारों का संकलन है, जो समान बोली बोलते हो, एक ही भूखण्ड पर अधिकार करने का दावा करते हों अथवा दखल रखते हो तथा जो साधारणतया अन्तर्विवाही न हो यद्यपि मूल रूप में चाहे वैसे रह रहे हो।[(24)]

"इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इंडिया"

(3) जनजाति विकास के आदिम अथवा बबेर आचरण में लोगों का एक समूह है जो एक मुखिया की सत्ता स्वीकारते हो तथा साधारणतया अपना एक समान पूर्वज मानते हैं।[(25)]

"आक्सफोर्ड शब्द कोष"

(4) जनजाति समूह की सामान्य विशेषताएँ यह है कि जनजाति की अपनी एक भाषा एक संस्कृति एक भू-भाग होता है, यह परिवारों का एक समूह है, इनमें एक मुखिया होता है, व गोत्र होता है, अपना एक नाम जनजाति का होता है।[(26)]

"डॉ. डी.एन.मजूमदार"

छत्तीसगढ़ की प्रमुख जनजातियाँ

छत्तीसगढ़ में अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या 66,16,596 है जिसमें पुरूष जनसंख्या 32,87,334 तथा महिला जनसंख्या 33,29,262 है। इस आधार पर छत्तीसगढ़ को एक जनजाति बहुल राज्य कहा जाता है। संविधान के अनुछेद 342 (i) में सूची (ब) जातियां, अनुसूचित जनजाति कहलाती है। 2001 जनगणना के अनुसार भारत में जनजातियों का प्रतिशत 8.2 था, जब कि छत्तीसगढ़ में यह 31.76 प्रतिशत है। जनजातियों की संख्या के मामले में छत्तीसगढ़ का भारत में पांचवा स्थान है। 42 जनजातियों वाला छत्तीसगढ़ एकमात्र राज्य है जहाँ इतनी विविध जनजातिया निवास करती है।[27] राज्य के सभी 18 जिलों में जनजातियों का निवास है, यद्यपि उनकी संख्या में अंतर है, दंतेवाड़ा, कांकेर, बस्तर और सरगुजा में ही राज्य की सम्पूर्ण जनजातियों का आधा भाग निवासरत है। प्रदेश में जनजाति की सर्वाधिक आबादी सरगुजा में है। यहाँ लगभग 10 लाख 76 हजार आदिवासी रहते हैं, जो सरगुजा की कुल आबादी का 54.60 प्रतिशत है। इसके बाद क्रमशः बस्तर (8.66 लाख) और दंतेवाड़ा (5.64 लाख) आते हैं।

जिले में प्रतिशत के हिसाब से दंतेवाड़ा में सर्वाधिक 78.52 प्रतिशत आबादी जनजातियों की है। यह प्रतिशत सबसे कम जांजगीर-चांपा, रायपुर, दुर्ग के जिलों में है। इनकी सबसे कम आबादी कवर्धा में है लगभग 1 लाख 21 हजार है।[28]

छत्तीसगढ़ राज्य में 42 अनुसूचित जनजातिया निवास करती है - (1)अगरिया (2)आंध्र (3)बैगा (4)भैना (5)भरिया (6)भूमियां (7)भूनियां (8)ऊरिया (9)पालिहा (10)पांडो (11)भतरा (12)भील भिलाला (13)भील मीना (14)भुंजिया (15)बियार (16)बिंझवार (17)बिरहुल (18)डामौर (19)धनवार (20)कोंदर (21)खरिया (22)कोंध (23)कोल (24)कोलम (25)कोकक् (26)मांझी (27)कोरबा (28)मंझवार (29)मवासी (30)मुंडा (31)नगेसिया (32) ऊरांव (33)पाव (34)परधान (35)पारधी (36)परजा (37)सहरिया (38)सौंता (39)सौंर (40)सवर (41)सोंर आदि प्रमुख है।[29]

प्रमुख जनजातियाँ :- छत्तीसगढ़ में निवास 42 अनुसूचित जनजातियों में निम्नलिखित प्रमुख जनजातियॉ इस प्रकार हैं -

(1) गोंड :- छत्तीसगढ़ की जनजातियों में गोड़ सबसे अधिक उन्नतशील तथा सभ्य जनजाति है। यह राज्य की सबसे बड़ी जनजाति है। इस गोंड़ शब्द का प्रयोग वस्तुतः गुण्ड शब्द या कोंड

या कुंड का विकृत कोंड शब्द तेलगू के कोंडा से निकला है। जिसका अर्थ पर्वत होता है। इस प्रकार गोंड शब्द को पर्वत में रहने वाले का पर्याय माना गया है। गोंड की त्वचा का रंग काला तथा बाल सीधे एवं काले होते हैं। इनके होंठ पतले नथुने फैले हुए तथा चौंड़ा मूँह और सिर चौंड़ा होता है।[30] गोंडो की सर्वाधिक संख्या बस्तर संभाग में है, इनका प्रचलित गोत्र नेताम, मरकाम,टेकाम है। ये जीविका पालन के लिए कृषि व शिकार, फल-फूल व कन्द आदि जंगलों से एकत्रित करना व हाट बाजारों में बेचकर जीविका चलाते हैं। नृत्य गायन में अत्यधिक रूचि रखते हैं। छत्तीसगढ़ के कवर्धा जिले में इनकी रियासत भी रही है। ये अपने परम्परागत रीति रिवाजों के मामलें में कट्टर होते हैं, यद्यपि समगोत्रिय विवाह नहीं करते। गोंड जनजाति मुख्यत: दो प्रमुख वर्गों में विभक्त रहे हैं। राजगोंड और धुर गोंड। राजगोंड राजपूतों के प्रभाव में आने वाले शासक वर्ग से संबंधित थे, जबकि धुर गोंड सैनिक थे। इनके प्रमुख देवता हिन्दु देवताओं के साथ ठाकुर देव, माता बाई, दूल्हादेव, बाधेश्वर, सूरजदेव, खैरमाता (ग्राम्य देवी) आदि की पूजा होती है। प्रमुख नृत्य में करमा, सैला, भजैनी, सुआ, दीवानी, बिरहा, कहरवा, आदि है।[31]

(2) हल्बा :- यह जनजातिय छत्तीसगढ़ राज्य की दुर्ग, धमतरी, राजनांदगांव, बस्तर, कांकेर एवं दंतेवाड़ा जिले में मुख्यत: निवास करती है। हल्बा लोग अपनी उत्पत्ति पार्वती महादेव से मानते हैं। किन्तु इस जनजाति में प्रचलित किवंदती के अनुसार ये अपनी उत्पत्ति रूखमणी हरण के प्रसंग से जोड़ते हैं, हरण के समय बलराम ने सैनिकों को बल और पराक्रम के द्वारा रोक दिया था। जिससे प्रभावित होकर सिपाहियों ने उनके अस्त्र-हल एवं मूसल को अपना लिया। उन्हीं सिपाहियों की संताने कालांतर में हल से धान की खेती करने लगे तथा मूसल से बहाना में कुटकर चिवड़ा बनाने लगे। हल से कृषि की कला में निपुण होने के कारण हल वाहक शब्द की व्युत्पत्ति से हल्बा कहलाये। गोत्र व्यवस्था से बंधे हुए हल्बा लोग में से अधिकांश कबीरपंथ को मानने लगे हैं। नरेबा, सुरत, परेत, नायक, भंडारा इनकी उप शाखाएँ है। ये जनजाति एक अच्छे कृषक के रूप में सामने आ रहे हैं, एवं मिलनसार स्वभाव के होते हैं। इनकी एक शाखा तन्त्र-मंत्र में विश्वास करती है और दुर्गा पूजा करती है। इनमें शिक्षा का स्तर अपेक्षाकृत अच्छा है।[32]

(3) मुड़िया :- मुरिया गोंडों की एक उपजाति है, मुरिया नाम मुड से विकसित हुआ है, जिसका अर्थ है पलाश का वृक्ष है, यह प्रजाति मुख्य रूप से बस्तर में पायी जाती है। ये

कोण्डागांव और नारायणपुर तहसील में मुख्य रूप से निवास करते हैं। मूरिया गोंडी व हल्बी बोलियाँ बोलते हैं, इनकी शरीर रचना मध्यम, रंग सांवला एवं नाक–नक्षा सुंदर होते हैं। ये कृषि व वनोपज एकत्रित कर अजीविका का निर्वहन करते हैं। जमीन बदल बदलकर खेती करना इनकी प्रमुख विशेषता है। इनकी जीवन शैली में घोटूल सर्वाधिक महत्वपूर्ण आकर्षण है। नृत्य गायन व मदिरापान करना इनकी संस्कृति की प्रमुख विशेषता है। नवाखानी, जात्रा, चाड़, सेवा आदि इनके प्रमुख पर्व है। कसार इनके उत्सवों की श्रृंखला है, इस अवसर पर ये ककसार नृत्य भी करते हैं। मुड़िया शिल्पकला में भी पारंगत होते हैं।(33)

(4) माड़िया :– मुड़िया की तरह दण्डामी माड़िया भी बस्तर क्षेत्र की जनजाति है। इस अंचल के तीनों जिलों बस्तर, दंतेवाड़ा, कांकेर में माड़िया बिखरी हुई है, लेकिन जिन्हें दण्डामी माड़िया कहते हैं, वे विशेषकर अबुझमाड़ पहाड़ियो पर निवास करते हैं, और इसलिए इन्हे अनुसमाड़िया भी कहते हैं। माड़ियों का एक वर्ग गौर माड़िया कहलाता है, क्योंकि ये लोग जंगली भैंसा के सींग की बनी टोपी पहनते हैं। माड़िया पुरूषों का शरीर लम्बा, छरहरा रंग सांवला, नाक थोड़ी चपटी किंतु उठी हुई होती है, स्त्रियों का कद मध्यम रंग सांवला होता है। ये परिश्रमी होते हैं। इनका मूँह चौड़ा एवं होंठ मोटे होते हैं। अबुझमाड़िया पुरूष अपने सिर पर बोझा कभी नहीं ले जाते, यह कार्य स्त्रियों का है। माड़िया लोग बेबर खेती करते हैं, अर्थात झूम खेती। इनके सामाजिक संगठन में ओझा गुनिया, बड्डे, गायता का काफी महत्व है। गौर नृत्य प्रिय नृत्य है जिसे वोरियर ऐल्विन ने सर्वश्रेष्ठ नृत्य की संज्ञा दी है।(34)

(5) उरांव :– यह जनजाति छत्तीसगढ़ में सरगुजा, कोरिया, रायगढ़, जशपुर एवं बिलासपुर जिलों में इनका निवास स्थान है। उरांव जनजाति भाषा के आधार पर द्रविड़ वर्ग की मानी जाती है, पारंपरिक कथाओं एवं किवंदतियों के अनुसार इनका मूल स्थान दक्खन है, जहाँ से ये उत्तर की ओर स्थनांतरित हुए तथा अंत में छोटा नागपुर में कृषक के रूप में बस गये। उरांव काले रंग के मध्यम आँख, पुतली का रंग काला, उठी हुई नाक, मोटी नाक वाले मध्यम कद के होते हैं, बाल घने काले घनी दाढ़ी, शरीर पर सघन रोम एवं लंबे सिर वाले होते हैं। ये विशेषताएँ अस्ट्रिक से मिलती है। ये लोग मिट्टी की झोपड़ी बनाकर रहते हैं, प्रत्येक गांव में नृत्य का मैदान होता है, जिसे अखाड़ा कहते हैं। इनके गोत्र टोटम से संबंधित होते हैं, मिंज, लकड़ा, केरकेट्टा इनके पारम्परिक गोत्र है। इनके युवा गृह घुमकोरिया कहलाते हैं। सरना पुजा, करमा पुजा, कूल देव पुजा इनके प्रमुख त्यौहार है। सरहुल, करमा, घुड़िया, डण्डा इन जनजाति के प्रमुख नृत्य है। ये कुरूख बोली बोलते हैं।(35)

(6) कमार :- छत्तीसगढ़ की आदिम जनजाति है, मुख्य रूप से बिंद्रानवागढ़, फिंगेश्वर, मैनपुर और धमतरी नवागढ़ व सिहावा क्षेत्र में निवास करती है। इसका प्रमुख संकेद्रण रायपुर जिले में है। इनके दो उप वर्ग है- (1) बघुराजियापे (2) मकाड़िया, इनके आजीविका का मूख्य स्त्रोत अस्थाई कृषि है, जिसे वे दाही कहते हैं। ये कौरवों को अपना पुर्वज मानते हैं। बांस के बर्तन बनाना इनका पारम्परिक व्यवसाय है। कमार वन देवताओं के अतिरिक्त वे महादेव और हनुमान की भी पूजा करते हैं। कमारों में अपने से नीची जाति के व्यक्ति के यहाँ भोजन ग्रहण करना बड़ा सामाजिक अपराध माना जाता है।[36]

(7) पहाड़ी कोरबा :- यह अत्यंत पिछड़ी जनजाति है, यह रायगढ़, जशपुर, सरगुजा, कोरिया, बिलासपुर और जांजगीर में पाई जाती है। इनकी दो उपजातियाँ है, (1) पहाड़ी कोरबा जो पहाड़ों पर रहती है (2) डिहाड़ी कोरबा जो मैदानों में उतर आयी है। अत्यंत पिछड़ी अवस्था में रहने वाली यह जनजाति बेवर खेती के लिए जानी जाती है। ये जनजाति अपना निवास बार-बार बदलते हैं। पहाड़ी कोरबा बहुत कम वस्त्र पहनते हैं क्योंकि उनकी आर्थिक स्थिति ठीक नहीं है। छः वर्ष से नीचे के सभी बच्चे सिर्फ लंगोटी पहनते हैं। पुरूष केवल निचे धोती घुटने तक या सिर्फ लंगोट पहनते हैं। ठंड के समय सारा शरीर चादर से ढंक लेते हैं। कोरबा औरतें अपने शरीर को धोती से ढकती है।[37] देहारी या डिहाड़ी कोरबा चूंकि थोड़े संपन्न हो गये हैं इसलिए पुरूष कमीज धोती पेंट पहनते हैं, तथा औरतें साड़ी व ब्लाऊज पहनने लगी है। पहाड़ी कोरबा पुरूष लंबे गठीले शरीर वाले तथा महिलाएं मध्यम कद काठी की सुडौल होती है। पहाड़ी कोरबा पुरूष गोटीमाला और मूंगा माला गले में पहनते हैं तथा अपनी कलाई में कड़े या एल्युमिनियम के कड़े पहनते हैं। स्त्रीयाँ मूंगमाला, वेरा (कलाई में) पैरों के लिए पैरी, नाक में नखूटी पैर में बिछिया और कान में टरकुला पहनते हैं। पहाड़ी कोरबा स्त्रीयाँ हाथों व पैरों में 4-6 इंच तक गोदना गुदवाती है।[38]

(8) भतरा :- यह एक आदिम जनजाति है जो बस्तर, दंतेवाड़ा, कांकेर एवं रायपुर जिले के दक्षिण भाग में निवास करते हैं। भतरा शब्द का अर्थ सेवक होता है। अधिकांश भतरा ग्राम चौकिदार या अर्थ सेवक होते हैं। इनकी उपजातियां सतभतरा, अमनेत और पीत है, ये कृषि कार्य व घरेलु नौकर का काम करते हैं, ये समगोत्री है, और एक ही गोत्र में विवाह नहीं करते हैं। ये स्थायी कृषि करते हैं, मुख्य फसल धान है, यह जनजाति शिकार देव (माती देव) की पूजा करते हैं।[39]

(9) भारिया :- ये मुख्यत: बिलासपुर और कोरबा व जांजगीर जिले में इनका निवास पाया जाता है। भूमिया भूर्रहार व पंडो इनकी उपजातियाँ है। पतालकोट (छिंदवाड़ा म.प्र.) में ये लोग आदिम युगीन जीवन बिता रहे हैं। भारिया जंगलों में एकांत और ऊँची जगहों में रहना पसंद करते हैं। भारिया जहाँ बसे होते हैँ उसे दाना कहते हैं। एक दाना में दो से लेकर पच्चीस घर होते हैं। भारिया द्रविड़ियन प्रजाति के आदिम लोग हैं। भारिया सामान्यत: डरपोक प्रवृत्ति के कम बोलने वाले अपने में मस्त रहने वाले, सच्चे ईमानदार और मेहनती होते हैं। भारिया लोग पहले ढहिया खेती करते थे, किंतु आजकल स्थायी खेती करने लगे हैं। ये लोग बुढ़ादेव, दुल्हादेव, बरूआ, नागदेव की पूजा करते हैं।[40]

(10) बैगा :- द्रविड़ समुदाय की यह जनजाति छत्तीसगढ़ में मुख्य रूप से बिलासपुर, राजनांदगांव और सरगुजा जिलों के पहाड़ी क्षेत्रों में निवास करती है। इसकी उपजातियाँ बिंझवार, नरोतिया, भरोतिया, नाहर, रैमैना, काद भैना प्रमुख है। बिलासपुर जिलें में संकेद्रण पाया जाता है। विश्व की सबसे अधिक गुदना प्रिय जनजाति है। बैगा स्त्रियाँ पुरे शरीर पर गुदना गुदवाती है। बैगा सामान्यत: मध्यम कद काठी और सुडौल बनावट के होते हैं, रंग सांवला नाक चपटी होंठ मोटे शरीर गठा हुआ होता है। औरतें भी सांवली होती है लेकिन मंडला-बिलासपुर के सीमा क्षेत्र सिन्दुरखार की पहाड़ी पर रहने वाली कुछ बैगीन स्वेत वर्ण की भी मिली है बैगा अपने स्वभाव के कारण ऊँचे स्थानों एव जंगलों में रहना पसंद करते हैं। बैगा समूह में रहना पसंद करते हैं। करमा, सैला, परधोन और ढाग इनके प्रमुख नृत्य हैं।[41]

(11) कोरकू:- कोरकू छोटा नागपुर के कोलीय जनजातिय समूह के अंतर्गत आने वाली एक जनजाति है। अतीत में इस समूह की अनेक जनजातियो का छोटे-छोटे कबीलों के रूप में विभिन्न क्षेत्रों मे प्रसार हुआ है। छत्तीसगढ़ में सरगुजा, रायगढ़, बिलासपुर में जनजातियाँ निवासरत है। बांधरिया, बोपची, मावसी, निहाल, नाहुल बोंधी आदि इनकी उपजातियाँ है। इनकी मातृ भाषा मुंडा भाषा परिवार से संबंधित है। जनजाति में प्रचलित प्रथा के अनुसार एक पुत्र अपने माता-पिता के साथ तब तक रहता है जब तक कि उसका विवाह न हो जाए। विवाह

के पश्चात वह पृथक गृहस्थी बसा लेता है। उस प्रथा के कारण केवल सबसे छोटा पुत्र ही विवाहोपरान्त माता-पिता के साथ रहता है।[42]

(12) बिंझवार :- बिंझवार शब्द की व्युत्पत्ति विघ्न पर्वत से हुई है यदि यह सही है तो मूल रूप से इस प्रजाति का नाम विन्ध्यवार या विधंवार रहा होगा, जो आगे चल कर बिंझवार हो गया। ये जाति विन्ध्यवासिनी देवी को इस प्रजाति के लोग कुल देवी के रूप में मानते हैं। बिंझवार छत्तीसगढ़ में मुख्य रूप से रायपुर, बिलासपुर, एवं रायगढ़ जिले में निवास करती है। अन्य जनजातियाँ की तुलना में इनकी स्थिति काफी अच्छी है, चार उपजातियां बिंझवार, सोनझार,बिरझिया और बिझिया है। बिंझवार प्रजाति में तीर जाति चिन्ह के रूप में प्रयुक्त होता है। इनकी महासभा का नाम कोटा-सागर है। शहीद वीर नारायण सिंह इसी जनजाति समुदाय से थे।[43]

(13) कंवर :- यह जनजाति मुख्य रूप से बिलासपुर, रायपुर, रायगढ़ व सरगुजा जिले में पाये जाते हैं। कंवर अपने 117 गोत्र बतलाते हैं, किन्तु ये सभी गोत्र तंवर, कमलबसी, पैकरा, दूध कंवार, रथिया या राठिया, चेरवा तथा राउतिया उपभागों में बंटे हुए हैं। ये छत्तीसगढ़ी व सादरी बोली बोलते हैं। इनके टोटम समूहों को गोटी कहते हैं। ये स्वच्छता प्रिय होते हैं। ये अपने को कौरंव वंशी मानते हैं, तथा करूदेव और दूल्हादेव की पूजा करते हैं। खेती किसानी इनका प्रमुख व्यवसाय है। बदली हुई परिस्थितियों में कंवर राहत कार्यों में तथा अन्य शासकीय विकास कार्यों में काम करना पसंद करते हैं। अन्य आदिवासियों की ही भांती कंवर महिलायें छाती पर कृष्ण भगवान का रूप गोदवाती है जिससे वे अलग से ही पहिचानी जा सकती है।[44]

(14) कंध या खोण्ड :- खोंड जनजाति कान्ध या कंध के नाम से भी विख्यात है, ये प्रमुख रूप से रायगढ़ के पूर्वी भाग में और रायपुर के दक्षिणी भागों में पाये जाते हैं। ये अपने को कुई लोका या कुई-पंजू कहते हैं। कुई तेलगू में पर्वत सूचक शब्द है। कान्धों के दो प्रमुख वर्ग है, कूटिया खोंड और राज खोंड। कूटिया खोंड अभी भी वन्य अवस्था में है, ये जंगल में शिकार को फाड़कर उसे अपने घर ले जाते हैं। जिस दिन बच्चे का नामकरण होता है उसी दिन उसे

सुअर या बकरे पर बैठाकर घुमाया जाता है। राज खोंड सम्पन्न कृषक है, मृतक के साथ एक रूपया गाड़ने का रिवाज है।(45)

(15) भैना :- यह जनजाति सतपुड़ा पर्वतमाला और छोटा नागपुर के पठार के बीच बिलासपुर, रायगढ़, बस्तर, और रायपुर क्षेत्र में पाई जाती है। यह मूलत: मिश्रित प्रजाति है। माना जाता है कि बैगा और कमार आदिवासी समूहों के लोगों से यह प्रजाति निर्मित है संभवत: विभिन्न कारणों से सामाजिक रूप से बहिष्कृत लोग ही इस प्रजाति के जनक है। इनका मूल व्यवसाय खेती है, ये लोग अपेक्षाकृत कम रूढ़िवादी और शिक्षित है। इनके देवी का नकटी देवी है।(46)

(16) धनवार :- धनवार जिन्हे धनुहार भी कहा जाता है। छत्तीसगढ़ के बिलासपुर जिले में प्रमुख रूप से पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त जांजगीर, कोरिया, एवं सरगुजा जिले में भी पाये जाते हैं। ये संभवत: गोंड और कंवारों की संताने है, धनवार अपने धनुष धामन वृक्ष से बनाते हैं। इनके बाणों की नोंक लोहे की होती है, जिसे फणि कहते हैं। धनवार ठाकुर देव की अराधना करते हैं। प्राय: पहले पुजा जन्म पर उसे एक बकरा भेंट दिया जाता है। धनवार पुरूष बिना गोदना गुदवाये वाली स्त्री के हाथों जल ग्रहण करना उचित नहीं समझते। धनवार यद्यपि मूल रूप से आखेट पर निर्भर रहने वाली जनजाती है, पर वे अब कृषि मजदूर और छोटे किसान भी है।(47)

(17) नागेसिया :- नागेसिया जनजाति मूल रूप से छोटा नागुपर क्षेत्र की है। छत्तीसगढ़ में यह जनजाति मुख्य रूप से रायगढ़, सरगुजा क्षेत्र में पायी जाती है। नागेसिया अपने को किसान भी कहते हैं। नागवंश से अपनी उत्पत्ति मानने वाली यह जनजाति मुंडारी या संदेरी भाषा बोलती है। इनके तिलहा, धरिया और सेंदुरिया उप जातिया हैं। इनकी स्त्रियां कांच की चूड़िया नही पहनती। तिलहा स्त्रियां नाक में बाली नहीं पहनती किन्तु सेदुरिया में ऐसी कोई रोक नहीं है। इनके देवता का नाम बाघदेव है।(48)

(18) मंझवार :- मंझवार या मांझिया शब्द मांझी से ही विकसित है। यद्यपि मांझी नाविकों

के सरदारों को भी कहा जाता है। किन्तु संथालों में मांझी या मंझवार कबीले के सरदारों को कहा जाता है। मंझवार कोल प्रजाति के हैं तथा यह संभव है कि इन्होंने सर्वप्रथम मछली पकड़ने का कार्य प्रारंभ किया हो। एक दूसरा मत इन्हें गोड़ों की संतान मानता है, क्योंकि इनमें गोड़ों जैसे ही गोत्र नेताम, टेकाम, मरकाम आदि पाये जाते हैं। यह मुख्य रूप से सरगुजा जिले में पाये जाते हैं। ये दुल्हा देव को मानते हैं और होली इनका प्रमुख त्यौहार है। ये गोड़ों के समान करमा नृत्य भी करते हैं।(49)

(19) भूंजिया :- भूंजिया जनजाति छत्तीसगढ़ के रायपुर जिले में मुख्य रूप से पायी जाती है, रायपुर के बिन्द्रानवागढ़ तहसील में ही इनका संकेद्रण है। यह जनजाति गोड़ों की ही एक शाखा है। ये नेताम और मरकाम गोत्रों में विवाह करते हैं। बाण विवाह इनका लोकप्रिय विवाह है। इनके दो उपभेद क्रमशः चिंदा और चौखुटिया है। चिंदा बैगाओं से तथा चौखुटिया हल्बा और गोंड़ की संतान मानते हैं। भुंजिया सुअर मांस खाते हैं और रोगों का उपचार वे अंगों को तपते लोहे से दागकर करते हैं।(50)

(20) पारधी :- छत्तीसगढ़ में पारधी जनजाति का निवास मुख्यतः कांकेर, दंतेवाड़ा, बस्तर, सरगुजा, कोरिया, बिलासपुर तहसील कोरबा जिले में कटघोरा तहसील दुर्ग जिले में दुर्ग तहसील व बालोद, राजनांदगांव जिले में चौकी भानपुर तथा मोहला, धमतरी, महासमुंद जिले में है। इनके कई उपवर्ग है, इनमें वहोलिस, चीता पारधी, लंगोटी पारधी, फांस पारधी, टकनार, टाकिया प्रमुख है। यह जनजाति वन्य प्राणियों के शिकार तथा उन्हें पकड़ने में सिद्धहस्त है।(51)

(21) परजा :- इन्हे धुरवाा के नाम से भी जाना जाता है। यह बस्तर की एक विशेष जनजाति है। जो जगदलपुर तहसील के दक्षिणी सीमावर्ती प्रदेश तथा उत्तर-पूर्वी पठार तथा सबरी निम्न भूमि के मध्य पायी जाती है। परजा मूलतः गोंड़ जनजाति की प्रशाखा है, इनकी शारीरिक बनावट गोड़ों से मेल रखती है। किन्तु स्वभाव में भिन्नता के कारण ये गोड़ों से अलग है। इनकी मूल बोली उड़िया है। इसके अलावा ये हल्बी भी बोलते हैं। ये गोत्रों में बंधे हैं। परजा शारीरिक

दृष्टि से बलिष्ठ होते हैं। ये साहसी एवं परिश्रमी भी होते हैं। ये मुख्यतः कृषि कार्य करते हैं, ये डोंगर, हाड़ा तथा बेड़ा कृषि करते हैं। परजा जनजाति कलाप्रिय है, प्रमुख वाद्य ढोल है, पशु-पक्षियों की भांति मुद्राएँ बनाकर नृत्य करते हैं।(52)

(22) खैरवार :- खैरवार कोलों की एक प्रशाखा है खैर वृक्ष से कत्था निकालने के कारण खैरवार कहलाने वाली इस जनजाति का विरतरण सरगुजा में मुख्यतः तथा कुछ संख्या में बिलासपुर अंचल में है। खैरवार कत्था बनाने के अतिरिक्त वनोपज का संचयन तथा मजदूरी भी करते हैं। कुछ जिलों में जहाँ ये स्थाई रूप नहीं रहते वहां कत्थे के सीजन में पहुँच जाते हैं। खैरवार के अन्य धंधों में कृषि कार्य है, आजकल ये स्थाई कृषि ही करते हैं। खैरवार मूल कोल शाखा से काफी समय पूर्व ही अलग हो गये थे। अतएव ये अपनी मूलभाषा और देवताओं को भी भूल गये हैं। इनमें वधु शुल्क का प्रचलन है, ये गोमांस को छोड़कर सभी प्रकार के मांसों का सेवन करते हैं। ये बहुत अल्प मात्रा में वस्त्र धारण करते हैं, इनकी भाषा मुख्यतः बुन्देली और छत्तीसगढ़ी है।(53)

(23) अगरिया :- यह जनजाति मुख्यतः रायगढ़, बिलासपुर जिले में पाई जाती है। गोड़ों की एक शाखा अगरिया जनजाति का व्यवसाय लोहे को गलाकर औजार बनाना है, अतः अगरिया कहलाते हैं। ये उड़ददाल को शुभ संकेत के रूप में उपयोग करते हैं, ये इसका उपयोग वधुमूल्य के रूप में तथा अतिथि सत्कार के लिए करते हैं। अगरिया जनजाति के प्रमुख देवता लोहासूर है, जिनका निवाास धधकती हुई भटिठयों में माना जाता है। अगरिया लोग अपने देवता को काली मुर्गी भी भेंट करते हैं। इनका प्रिय भोजन सुअर का मांस है। ये जनजाति लोहा गलाने के अतिरिक्त कृषि कार्य व अन्य धंधे भी करते हैं।(54)

(24) संवरा :- संवरा जनजाति मुख्यतः बिलासपुर, रायगढ़, जशपुर, रायपुर जिले में निवास करती है। इनके पूर्वज भील थे, उड़िया और लरिया संवरा दो प्रकार के होते हैं, उड़िया संवरा में भी दो उपभेद होता है, खूटियां और झेरिया, खूंटियां संवरा शव को किसी खूँट या पुराने वृक्ष के निचे दफनाते हैं, और झेरिया किसी झरने या नाले के तट पर दफनाते हैं। ये कन्या

का विवाह जल्दी करने के पक्षपाती होते हैं। चूड़ी आदि की प्रथा इनमें है। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि करना है।(55)

(25) दोरला या दौर्ला :– यह जनजाति दक्षिणी बस्तर में पायी जाती है, कोंटा तहसील में सुकमा से 25 कि.मी. दक्षिण से इनकी सीमा प्रारंभ होती है। साबरी नदी इनके क्षेत्र का सीमांकन करती है। यह जनजाति आंध्र और उड़ीसा में भी पाई जाती है। ग्रिससन के अनुसार मैदानों में रहने वाले कौयार दोर्ला है। दोर्ला कृषक है, किन्तु उनके औजार साधारण है, ये शिकार फुरसत के समय करते हैं। लकड़ी और बांस के बने हुये घरों में रहते हैं। दोर्ला और माड़ियाओं के नृत्य काफी मिलते जुलते हैं। विवाह कम उम्र में कर दिया जाता है, जो कि अन्य जनजातियों में साधारणत: स्वीकार्य नही है।(56)

(26) गडबा या गड़वा :– गदबा स्वयं को गुथन कहते हैं। यह विशाखापट्टनम में पाये जाते हैं। उनकी भाषा भण्डारी है, पर छत्तीसगढ़ में केवल बस्तर जिले में पाये जाते हैं। इनकी भाषा को गदवा कहा जाता है और उसी के आधार पर इस जनजाति का नामकरण दिया गया है। इनकी जाति प्रथा बहुत उदार है और ये भतरा, परजा और मुड़ियाओं को अपनी बिरादरी में शामिल कर लेते हैं। बिरादरी में मिलाने का उत्सव एक सुअर के बलिदान से होता है। गदवा लोगों के गोत्र नाम टोटम पर अधारीत होता है। गड़वा लोग प्रमुख रूप से खेतिहर मजदूर या कृषक का कार्य करते हैं।(57)

(27) नागरची :– नागरची गोंड समूह की जनजाति है, यह मध्यप्रदेश के छिंदवाड़ा, सिवनी, बालाघाट, भण्डारा और छत्तीसगढ़ में दुर्ग जिले मे पायी जाती है। नागरची शब्द संभवत: नगाड़ा बजाने वालों के लिए व्यक्त होता है ऐसा कहा जाता है कि ये लोग गोंड़ राजाओं के दरवाजों पर नगाड़ा तथा अन्य वाद्य यंत्र बजाते थे। कालांतर में इन वाद्य यंत्रों को बजाने वालों की अलग जाति हो गई है। अब नागरची प्रमुख रूप से कृषि धंधों में लगे रहते हैं। सामाजिक और धार्मिक आचार गोड़ों जैसी ही है। आज भी ये शहनाई, ढोल टिमकी और डुगडुगी बजाने में माहिर है।(58)

2.2- सामाजिक जीवन

छत्तीसगढ़ की जनजातियों का सामाजिक जीवन शांति प्रिय है। सभी जनजातियों में संयुक्त परिवार की प्रथा प्रचलित है। प्राय: सभी जातियों के परिवार पितृ सत्तात्मक होते हैं। परिवार का मुखिया वयो वृद्ध होता है, तथा परिवार के सभी सदस्य उसके आदेशों का पालन करते हैं। पारिवारिक सम्पत्ति का स्वामित्व गृह प्रमुख में निहित होता है। छत्तीसगढ़ की समस्त जनजातियों का सामाजिक ढांचा लगभग एक जैसा है। समस्त जनजातियों में एक समाज प्रमुख होता है। और समाज के कुछ नियम कानुन होते हैं। जिनका पालन किया जाता है। जनजातिय समाज में गोंड़, हल्बा, भतरा, सामाजिक दृष्टि से उच्च स्थान रखते हैं।(59)

विवाह प्रथा :-

(1) घोटुल गुड़ी :- मुड़िया जनजाति में कुंवारे लड़के, लड़की रात व्यतीत करते हैं, और अपना जीवन साथी मिल जाने पर आपसी सहमती में विवाह करवा दिया जाता है। इनकी नवयुवतीयाँ मोटियारिन तथा युवक चेलिक कहलाते हैं।(60)

(2) भगेली विवाह :- गोंड़ जनजाति में भगेली विवाह प्रथा लड़के लड़की की रजामंदी से होता है। इसमें कन्या अपने प्रेमी के घर भागकर आ जाती है और एक निश्चित सामाजिक विधान के तहत यह विवाह संपन्न होता है।(61)

(3) पठौनी विवाह :- गोंड़ जनजाति में विवाह के अवसर पर जब लड़की वाले बारात लेकर लड़के वाले के घर जाते हैं। तब ऐसे विवाह को पठौनी विवाह कहा जाता है।(62)

(4) चढ़ विवाह :- चढ़ विवाह प्रथा में वर पक्ष बाजे गाजे के साथ वधू के घर जाता है। और सामाजिक विधान के साथ घर लेकर आता है।(63)

(5) लमसेना विवाह :- इसमें लड़का अपने ससुराल में आकर रहने लगता है। और ससुराल का काम काज देखता है।(64)

(6) दुध लौटावा :- इसमें गोंड जनजाति में ममेरे, चचेरे लड़के, लड़कियों का विवाह आपस में कर दिया जाता है। इसे दुध लौटावा कहते हैं।[65]

(7) पाय सोतुर :- गोंड और अन्य जनजातियों में अपहरण कर के विवाह किया जाता है उसे पाय सोतुर कहते हैं।

(8) विधवा विवाह तथा तलाक प्रथा :- इस प्रकार का विवाह उरांव कोरबा जनजाति में प्रचलित है।[66]

(9) कन्या मूल्य :- कोरबा जनजाति में कन्या मूल्य चुकाने पर ही इनमें विवाह होता है।

(10) देवर विवाह :- गोंड़ जनजाति में विधवा देवर से विवाह करती है। जो समाज में मान्य होता है।

(11) बहन विवाह :- पहाड़ी कोरबा जनजाति अपनी बहनों से भी विवाह कर लेते हैं।[67]

हल्बा समाज में दो तरह के विवाह संक्षिप्त एवं विस्तृत प्रचलित है। भतरा समाज में चार प्रकार के विवाह , मंगनी विवाह, प्रेम विवाह, विधवा विवाह और धरजियां विवाह होते हैं। मुरिया समाज में मंगनी विवाह, प्रेम और अपहरण विवाह प्रचलित है। जनजाति समाज में यदि कोई विवाहिता स्त्री नया पति बनाती है तो नया पति उसके पुराने पति को खर्च देता है। यह क्षतिपूर्ति समाज द्वारा मान्य होती है, अन्य जनजातियों में विधवा विवाह का भी प्रचलन है। भतरा समाज में विधवा विवाह, विधवा को चूड़ी पहनाकर किया जाता है। कंवर जनजाति में समगोत्रिय निषेध है।[68]

खान-पान, रहन-सहन तथा वेश-भूषा

बिरहोर जनजाति खाद्य संग्रहण और शिकार के इर्द-गिर्द घूमती है। ये झुण्ड बनाकर जंगल में जाते हैं। महुआ के फूल और इमली खाना इन्हें बहुत प्रिय है। मुर्गी, बकरी, सुअर और कुत्ते इनके पालतु जानवर है। माड़िया जंगली भैंसों के सींग की टोपी पहनते हैं। मारिया टोकरी बनाने और बुनाई का काम करते हैं। बैगा जनजाति भूमि को माता के रूप में स्वीकार

करते हैं। कोरबा जनजाति जमीन बदलकर खेती करते हैं। अगरिया जनजाति में हिन्दू संस्कृति का प्रभाव ज्यादा है। इनके समाज में उड़द दाल का विशेष महत्व है, जिसे वे विशेष त्यौहारों और अतिथि सत्कार के समय विशेष रूप से बनाते हैं। वधु मुल्य के रूप में भी उड़द , तिल और रूपए दिये जाते हैं।

पारधी मराठी शब्द पारधू से उत्पन्न हुआ है, जिसका अर्थ आखेट है, इन्हें बहेलिया के साथ शामिल किया गया है। ये बंदूक से शिकार करना गलत कार्य मानते हैं। गड़ाबा जनजाति में उच्च जाति का कोई भी व्यक्ति कुछ धार्मिक संस्कारों के बाद गड़ावा बन सकता है। जनजातियों में गांव का मुखिया गौटिया कहलाता है। बैगा लोगों का पहला भोजन "बासी" दोपहर का "पेजा" और रात्रि का "बियारी" होता है, इनकी कृषि बेवार कृषि कहलाती है।(69)

समस्त जनजातियों में युवा-गृह की परंपरा है। हल्बा जनजाति में साक्षरता का प्रतिशत अन्य जनजातियों की अपेक्षा अधिक है। पहले बस्तर राज्य की सरकारी बोली हल्बी थी। इनमें छुआ-छुत का अधिक महत्व है। माड़िया जनजाति अस्थाई मकान में रहते हैं और 5-7 वर्षों में पुनः नवीन मकान बना लेते हैं। ग्रीगसेन ने इनका गंभीर अध्ययन किया है। माड़िया जनजाति पेंड्रा खेती करते हैं। जंगल में अलग झोपड़ा बनाया जाता है, जिसमें स्त्री पुरूष आपस में मिलते हैँ, इस झोपड़े को सिहारी कहा जाता है।(70)

मुड़िया जनजाति में इनकी महिलाएँ स्वच्छता को पसंद करती है। इनमें घोटुल गुड़ी में सामाजिक , धार्मिक, सांस्कृतिक परंपराओं को अविवाहित स्त्री, पुरूष सीखते हैं। भारिया जनजाति जहाँ निवास करते हैं, वह ढाना कहलाती है। खेती प्रमुख धंधा है। लघु वनोपज व जड़ी बुटिया का संग्रहण द्वितीय आर्थिक स्त्रोत है। बिदुरी, नवाखाई, जंवारा आदि पर्व मनाते हैं। विवाह के अवसर पर भड़म नृत्य इनका प्रिय नृत्य है।(71) कमार जनजाति में मरने के बाद व्यक्ति के साथ उसके उपयोग की वस्तुए उसके साथ दफना दी जाती है। जमीन बेचकर उसका

क्रिया कर्म किया जाता है। ये जनजाति सैनिक सेवा को अपना परंपरागत व्यवसाय मानती है। कमारों की परंपरागत पंचायत में सर्वोच्च स्थान कुरहा का होता है, ये कभी अपने सिर के बाल नही कटवाते, मात्र मृत्यु संस्कार के समय सिर के बाल कटवाते हैं।(73)

कोरबा जनजाति का वंश पिता के नाम से चलता है, यह छत्तीसगढ़ की सबसे पिछड़ी जनजाति है। पाँच वर्ष की आयु होने पर लड़के के हाथ 10–16 निशान आग से जलाये जाते हैं, जिसे "दरहा" कहते हैं। ये हंडिया नामक शराब बनाते हैं।

कोरकू जनजाति में स्त्रियों की स्थिति पुरूषों से श्रेष्ट होती है। विवाह में वधूमूल्य चुकाना होता है। परजा जनजाति में लड़के लड़कीयों के लिए पृथक–पृथक सांस्कृतिक घर होते हैं, जिसे "धांगाबक्सर" कहते हैं। यह कलाप्रिय जनजाति है।(73)

गोड़ों का प्रिय पेय पेज है, जो चांवल और मक्का की माड़ से बनाई जाती है। माड़ की तासीर ठंडी होती है। अबूझमाड़िया शराब का सेवन करते हैं, इनकी शराब को लांदा कहते हैं, जिसे वे स्वयं बनाते हैं, और उसका सेवन करते हैं। स्त्री पुरूष तम्बाखू का सेवन करते हैं। ताड़ के वृक्ष से ये सल्फी निकालते हैं। और उसका सेवन करते हैं। बस्तर अंचल की अबूझमाड़िया, दण्डामी, माड़िया, घोटूल भूरिया, दोरला परजा–धुखा और गदवा जनजातियों की स्त्रियाँ पुरूष में गोदने का रिवाज पारम्परिक रूप से चला आ रहा है।(74)

जनजातियों में मृतक संस्कार अधिक विस्तार और विधि–विधान से किया जाता है। मारिया लोगों में शव को जलाया जाता है। प्रसव के समय गर्भवती स्त्री के मरने पर शव को दफनाया जाता है। छोटे बच्चे की मृत्यु पर उसके शव को महुआ वृक्ष के निचे दफनाया जाता है। विभिनन जनजातियों में मृतकों की स्मृति में काष्ट और शिला स्तंभ खड़े किये जाते हैं। प्रतिष्ठित या वृद्ध व्यक्ति के मरने पर पशु बली दी जाती है। कुछ जनजाति मरे हुए व्यक्तियों की याद में कलात्मक काष्ठ स्तंभ गाड़ दिये जाते हैं।(75)

2.3 - धर्म एवं विश्वास

जनजातिय धार्मिक आस्था व विश्वास :- धर्म को किसी वस्तु या शक्ति जो आलोकिक तथा परम संवेदनात्मक है के भय के प्रति मानव की एक अनुक्रिया कहा गया है।

(1) आत्मा :- कोरबा लोगों में एक आत्मा फसलों, वर्षा, पशुओं की अधिष्ठात्री होती है। जनजातियों में आत्मा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। ये जीववाद, हितकारी, व अहितकारी दोनों आत्माओं में विश्वास रखते हैं।

(2) अति प्राकृतिक शक्ति :- मुंडा जनजाति ओरांव जनजाति अति प्राकृतिक या अलौकिक शक्ति में विश्वास करती है। जिसे बोंगा कहा जाता है।(76)

(3) देवी देवता :- गोंड़ जनजाति का प्रमुख देवता दुल्हादेव बड़ा देव, नाग देव, तथा नारायण देव है मुड़िया जनजाति ठाकुर देव तथा महादेव की पूजा करते हैं। मुड़िया जनजाति का प्रमुख त्यौहार जात्रा नवाखानी है। यह जनजाति पराशक्ति पर विश्वास करती है। भतरा जनजाति शिकार देव माती देव की पूजा करते हैं। भातरया जनजाति, बूढ़ादेव, दुल्हादेव, तथा नागदेव की पूजा करते हैं, देवियों में जगतार, भवानी, नागदेवी, खेड़ापति, बंजारी माई की अराधना करते हें। ये बाघेश्वर देवता की पूजा करते हैं, उनकी मान्यता है कि ऐसा करने से उन्हे बाघ कभी नही खायेगा। बैगा जनजाति मृत्यु के बाद का जीवन मानते हैं। ठाकुर देव जो महुआ तथा साल के वृक्ष में निवास करते हैं। इनकी पूजा करते हैं। कमार जनजाति भी दुल्हा देव, ठाकुर देव, बतीगढ़ माई, छोटी माई की पूजा करते हें, ये तीर धनुष व शिकार के शौकिन रहते हैं, और शिकार को मारने के बाद उसका सिर काटकर पानी से धोकर वन देवता को अर्पित करते हैं, ये विशेषकर लोहे की पूजा करते हैं, बालों को अत्यंत पवित्र मानते हैं, इन्हें कटवाते नहीं हैं। कोरबा जनजाति रूढ़िवादी है, और इनका प्रमुख पर्व करमा होता है। इनके प्रमुख त्यौहार नवाखानी, करमा, देवारी(सोहराई), फगुआ (होली), है कुदकुकड़ी , कुटकी पूजा इनके प्रमुख पुजाएँ है।(77)

बिंझवार जनजाति में तीर जाति चिन्ह होता है, तथा विन्ध्यवासिनी देवी को अपनी अराध्य देवी मानते हैं। उरांव जाति में इनके गोत्र टोटम से संबंधित होते हैं, इनके नाम पशुओं, पक्षी, मछली, पौधे के नाम से रखे जाते हैं, ये अपने गोत्र के प्रतिक पौधों वृक्षों को नही काटते एवं पशु पक्षियों को जो इनके नाम से संबंधित होते हैं, उन्हें भी नही मारते हैं। एक तरह से यह जनजाति प्रकृति पुजक और संरक्षक होते हैं। इनका प्रमुख देवता का नाम धर्मेश है जो सूर्य

देवता का रूप माना गया है। गड़वा जनजाति का प्रमुख देवी बूढ़ी देवी या ठकुरानी माता है, कंवर जनजाति का प्रमुख देवता सागराखंड को माना जाता है। परजा जनजाति के मुखिया के घर के सामने पत्थर देवता निसान मुण्डा होता है, उसके घर के सामने जो चौपाल लगती है, वही उसकी पूजा की जाती है।(78)

इनके प्रमुख पर्व, दस, चैत, दीपावली, बड़ा धाना व लीनी जादरा, लांड़ी आदि है। इनके प्रमुख देवी देवता- दंतेश्वरी देवी, डुमा, डोंगदेव, महापुरा लक्ष्मी, लांड़ी एवं झांकर देव है। बैगा साल वृक्ष को पूजनीय मानते हैं, क्योंकि सालवृक्ष में उनका बड़ा देव रहता है। गोत्र व्यवस्था में बंधे हुए हल्बा लोगों में से अधिकांश कबीर पंथ को मानते हैं। अतः शराब और मांस का निषेध है। इनकी एक शाखा तंत्र-मंत्र में विश्वास करती है। ये मुख्यतह देवी और शक्ति उपासक है। इनके प्रमुख त्यौहार दशहरा, दीपावली, होली, नवाखानी, व जिंदरी पुजा है।(79)

वैसे छत्तीसगढ़ में जो जनजातियाँ है उनके अपने देवी देवता है और ये प्रकृति पूजा वृक्ष पूजा जीव जंतु की पूजा के साथ ही साथ देवी देवताओं की पूजा करते हैं, पर कुछ जनजातियाँ है जो हिन्दू रीति रिवाजों और धर्म को न अपना कर ईसाई धर्म को स्विकार कर लिया है। इनके प्रमुख ईश्वर यीशु मसीह है, जो परम पिता परमेश्वर के एक मात्र पुत्र है। इन्हे मानते है ये प्रमुख जनजाति है, उरांव, कंवर व सवर जनजाति है। ये जशपुर जिले में सरगुजा और बिलासपुर मे पाये जाते हैं। ये धर्म से इसाई है।(80)

पुर्वज पुजा :- जनजातियों के लिए पुर्वजों की क्रियाँ बहुत महत्वपूर्ण है। उनके धार्मिक विश्वासों में पूर्वज-पूजा का एक महत्वपूर्ण स्थान है। वे लोग इस बात से सहमत है कि एक मनुष्य की शक्ति एवं पहुँच नियंत्रित एवं सीमित दायरे तक है, लेकिन पूर्वज-पूजा के द्वारा वह उस शक्ति एवं पहुँच को प्राप्त कर लेता है। वे लोग पूर्वजों के अस्तित्व, उनकी रूचि एवं सांसारिक क्रियाओं में उनके प्रवेश में विश्वास रखते हैं। पूर्वज उनकी जिन्दगी में मिल जाता है। पूर्वजों की जीवात्माओं को पुकरा जाता है एवं उनकी पूजा- वर्ष में , अवसर आने पर या जब कोई आर्थिक रूप से पूजा करने के लिए तैयार रहता है उस समय की जाती है। छत्तीसगढ़ की लगभग सभी जनजातियों में पूर्वजों की पुजा का विधान है।(81)

छत्तीसगढ़ की धार्मिक आस्था

प्राचीन काल से ही छत्तीसगढ़ अनेक धार्मिक गतिविधियों का केंद्र रहा है। जो उसके पारस्परिक सहयोग और सदभावना की विशेषताओं को उजागर करता है। छत्तीसगढ़ में उपलब्ध अभिलेख इस बात को स्पष्ट करते हैं कि यहाँ शिव,विष्णु, दुर्गा, सूर्य, आदि देवताओं की उपासना से संबंधित अनेक मंदिर है। ब्राहम्ण देवी देवताओं के अतिरिक्त बौद्ध और जैन धर्मो के अस्तित्व के प्रमाण भी यहाँ के अभिलेखों तथा स्मारकों से मिलते हैं।(82)

(1) वेष्णव धर्म :- छत्तीसगढ़ में वैष्णव धर्म का अस्तित्व यहाँ के साहित्य अभिलेख सिक्के शिल्प आदि से ज्ञात होता है। विष्णु की मूर्ति छत्तीसगढ़ में बुढ़ीखार क्षेत्र में मिलती है। यहाँ वैष्णव धर्म का प्रचार-प्रसार शरीभपुरीय शासकों के काल में हुआ। शरभपुरीय शासकों के बाद यहाँ पाण्डुवंशियों का अधिपत्य कायम हुआ। वे भी वैष्णव धर्म को मानने वाले थे।(83) छत्तीसगढ़ में कलचुरी शासक शैव धर्म के उपासक होते हुए भी अन्य धर्मो के प्रति उदार थे। कलचुरी अभिलेखों से ज्ञात होता है कि इस वंश के शासकों ने नारायण ,रामचंद्र ओर गौरि के मंदिरों का निर्माण करवाया। तुम्माण मंदिर की द्वारा पट्टिका पर विष्णु के अवतारों का अंकन मिलता है। जांजगीर का विष्णु मंदिर एक दुसरा उदाहरण है रतनपुर से प्राप्त विष्णु की एक सुंदर प्रतिमा रायपुर के संग्रहालय में सुशोभित है। इससे प्रमाणित होता है कि छत्तीसगढ़ क्षेत्र में वैष्णव धर्म की लंबी परंपरा रही है।(84)

(2) शैव धर्म :- छत्तीसगढ़ में शैव धर्म के प्रचार के स्पष्ट प्रमाण मिलते है। छत्तीसगढ़ पर शासन करने वाले हैहयवंशी कलचुरि शासकों में अधिकांश शासक शिवोपासक थे। कलचुरियों ने अपनी राजधानी तुम्माण को बनाकर वहाँ उन्होंने बंकेश्वर महादेव का एम मंदिर बनवाया। छत्तीसगढ़ में तुरतुरिया शैवों की साधना का एक महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है। आरंग सिरपुर, पाली, तखतपुर, लाफागढ़ देवबालौदा, राजिम, बारसुर, कांकेर, गढ़धनोरा, रूद्रि आदि स्थानों में प्राचिन शिव मंदिर स्थापित है।(85)

(3) शाक्त धर्म :- शाक्त धर्म में शक्ति के विविध रूपों की पुजा होती है। देवी के महिषासुर मर्दिनी तथा सिंह वाहनी के अलावा अन्य रूपों की भी पूजा होती है। यहाँ प्राप्त अभिलेखों में पार्वती, दुर्गा, गौरी के मंदिरों के निर्माण का उल्लेख मिलता है। पुजारी पाली से प्राप्त गोपाल देव के अभिलेख में वराही, वैष्णवी चामुण्डा नामों से देवी की पूजा की गयी है। बस्तर क्षेत्र में देवी के विभिन्न रूपो की मूर्तियाँ उक्त साधना के महत्व को प्रमाणित करती है।(86)

(4) बौद्ध धर्म :- छत्तीसगढ़ में सातवाहनों के समय बौद्ध धर्म की सहायान शाखा विशेष रूप से प्रतिष्ठित थी। सिरपुर, तुरतुरिया दुर्ग आदि स्थानों में महायान शाखा से संबंधित मूर्तियों के अवशेष छत्तीसगढ़ में बौद्ध धर्म के प्रसार की कथा कहते हैं। सिरपुर, आरंग, रतनपुर, मल्लाहार में बौद्ध विहार, मूर्तिया तथा मठ के अवशेष प्राप्त हुए हैं। वर्तमान समय में कुछ सतनामी और हरिजन जाति के लोगों ने बौद्ध धर्म को स्विकार कर लिया है।(87)

(5) जैन धर्म :- छत्तीसगढ़ में जैन धर्म के प्रसार का काल छठवी शताब्दी के बाद का काल माना जाता है। छत्तीसगढ़ में आरंग, सिरपुर, तटलाहार, धनपुर, रतनपुर, पद्मपुर आदि स्थानों में जैन तीर्थकार की अनेक मध्यकालीन मूर्तिया पायी गयी है। वर्तमान समय में पूरे छत्तीसगढ़ में जैन संप्रदाय के लोग फैले हुए हैं। जिनका छत्तीसगढ़ के विभिन्न व्यवसायों पर उनका ही वर्चस्व है।(88)

(6) कबीर पंथ :- कबीर ने देहावसान के पश्चात उनके अनुयायिओं ने कबीर के सिद्धांतों के व्यापक प्रचार और प्रसार किया। छत्तीसगढ़ में भी कबीर पंथ की शाखा का निर्माण हुआ।(89) छत्तीसगढ़ में कवर्धा कबीरपंथियों का गढ़ था। प्रारंभ में कवर्धा को कबीरधाम के नाम से जाना जाता था। रूद्री (धमतरी) तथा कुदुरमल (बिलासपुर)भी कबीर पंथ के गढ़ है। छत्तीसगढ़ में कबीर पंथ की शाखा के प्रवर्तक धर्मदास जी थे। छत्तीसगढ़ में मुख्य रूप से रावत, मानिकपुरी, तेली, नाई, गोंड, सतनामी, हरिजन, कुर्मी, बनिया, लोहार, बढ़ई, गोलाई, ब्राह्मण, जोशी प्रजापति,धनकर, पढवाँ , सोनी, हल्बा आदि जाति के लोग कबीर पंथ को मानते हैं।(90)

(7) सतनाम पंथ :- छत्तीसगढ़ में सतनाम पंथ के प्रवर्तक महंत घासीदास जी माने जाते हैं। उनका जन्म गिरौद ग्राम के एक सतनामी परिवार में लगभग 1756 ई.के आस पास हुआ था। इस समय छत्तीसगढ़ की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति अस्त-व्यस्त थी।(91) उस समय के शैव,वैष्णव और कबीर पंथ अपनी ऐतिहासिक भूमिका को समाप्त कर जातिगत व्यवस्था और नीति के विरूद्ध कार्य करने में लगे थे। ऐसी स्थिति में यहाँ जबकि मराठा और

अंग्रजी शासन की भूल–भूलैया जनता में न्याय पाने के लिए संघर्ष करने की हिम्मत भी नही थी। ऐसे समय में घासीदास जी का जन्म हुआ। घासीदास जी ने अपने उपदेशों द्वारा उस युग की सामाजिक राजनीतिक, और अछुतोद्धार की आवश्यकताओं की पूर्ति की। उनके आंदोलन का मुख्य उद्देश्य हिन्दू समाज में सतनामियों की स्थिति को सुधारकर सवर्णो के आंतक को दूर करना था। वर्तमान में छत्तीसगढ़ की कुल जनसंख्या का 18% सतनाम पंथ को मानने वाले हैं और छत्तीसगढ़ की राजनीति में भी इनका वर्चस्व है।(92)

(8) ईसाई धर्म :– छत्तीसगढ़ में ब्रिटिश शासन की स्थापना के बाद से यहाँ ईसाई धर्म का प्रचार प्रसार तीव्रता से होने लगा। इस धर्म की ओर पिछड़ी हुई जाति का ध्यान अधिक आकृष्ट हुआ, क्योंकि ऐसा प्रचार किया जाता था कि ईसाई धर्म में सब लोगों के लिए स्थान है। भेद भाव की भावना से प्रताड़ित छत्तीसगढ़ के सतनामियों की ओर ईसाई धर्म प्रचारकों का ध्यान आकृष्ठ हुआ। सरगुजा रियासत में भी अनेक विदेशी मिशनरियों द्वारा प्रलोभनों एवं मिथ प्रचार के माध्यम से अनेक वनवासी लोगों को सामूहिक रूप से ईसाई बना लिया गया। परिणाम स्वरूप छत्तीसगढ़ की कुछ सतनामी व जनजातियों ने इसाई धर्म को स्विकार कर लिया है। इस तरह पूरे छत्तीसगढ़ में ईसाई धर्म को मानने वालों की संख्या काफी है।(93)

(9) मुस्लिम धर्म :– छत्तीसगढ़ में मुस्लिम सभ्यता और संस्कृति का प्रभाव यहाँ नही रहा है। प्रारंभ छत्तीसगढ़ में मुसलमानों की संख्या नगण्य रही है। अधिकांश मुसलमान रोजी–रोटी के नाम से छत्तीसगढ़ में आये थे। ये रायपुर शहर व आसपास के गांवों में रहते थे।(94) निम्न कोटी के मुसलमान रूई धुनने का काम करते थे। जो बहन्ना कहलाते थे। कांकेर , राजनांदगांव , खैरागढ़, छुईखदान , कवर्धा, शक्ति, रायगढ़, सारंगढ़ आदि छत्तीसगढ़ की रियासतों में मुसलमानों में सुन्नी जमात के लोग भी अधिक थे। शिया जमात के लोगों की संख्या उनकी अपेक्षा कम थी। ये बहुधा रोजगार करने के उद्देश्य से बसे थे। वर्तमान समय में छत्तीसगढ़ में मुसलमानों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है। छत्तीसगढ़ के लगभग हर छोटे बड़ों शहरों में इनकी मौजुदगी है।(95)

संदर्भ - सूची

(1) किशोर कुमार अग्रवाल, बीसवीं शताब्दी का छत्तीसगढ़, वैभव प्रकाशन रायपुर प्रथम संस्करण 2006 ,पृ.19-20

(2) हीरालाल शुक्ल, छत्तीसगढ़ का जनजातीय इतिहास,म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी प्रथम संस्करण 2003 पृ.80-82

(3) शांता शुक्ला छत्तीसगढ़ का सामाजिक सांस्कृतिक इतिहास,नेशनल पब्लिशिंग हाऊस नई दिल्ली 2002 पृ.147

(4) भगवान सिंह वर्मा, छत्तीसगढ़ का इतिहास,म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल, पृ.221-223

(5) जे.आर.वर्ल्यानी/व्ही.डी.साहसी छत्तीसगढ़ का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास,दिव्या प्रकाशन कांकेर बस्तर, प्रथम संस्करण 1997, पृ.220

(6) अरविंद शर्मा, छत्तीसगढ़ का राजनीतिक इतिहास,अरपा पॉकेट बुक्स बिलासपुर प्रथम संस्करण 1999, पृ.23

(7) जे.आर.वर्ल्यानी/व्ही.डी.साहसी, पूर्वाक्त पृ.221

(8) शांता शुक्ला पूर्वोक्त, पृ.150

(9) अरविंद शर्मा, छत्तीसगढ़ का राजनीतिक इतिहास,पूर्वोक्त, पृ.22

(10) जे.आर.वर्ल्यानी/पूर्वोक्त,पृ.222

(11) भगवान सिंह वर्मा, छत्तीसगढ़ का इतिहास,पूर्वोक्त, पृ.218

(12) शांता शुक्ला पूर्वोक्त, पृ.150

(13) जे.आर.वर्ल्यानी/व्ही.डी.साहसी, पूर्वाक्त पृ.223

(14) प्यारे लाल गुप्त, प्राचीन छत्तीसगढ़,पं. रविशंकर शुक्ल विश्वविद्यालय, प्रथम संस्करण 1973, पृ.380

(15) जे.आर.वर्ल्यानी/व्ही.डी.साहसी, पूर्वाक्त पृ.224

(16) शांता शुक्ला पूर्वोक्त, पृ.150

(17) जे.आर.वर्ल्यानी/व्ही.डी.साहसी, पूर्वाक्त पृ.225

(18) पूर्वोक्त

(19) जी.डी.बैरीमेन हिन्दू ऑफ द हिमाल्याज बर्कले, पृ.44

(20) ए.सी.दूबे, दि कमार , इथनोग्राफिक एण्ड फोक कल्चर सोसायटी लखनऊ यू.पी. 1951 पृ.128

(21) पी.सी.विश्वास, डी संथाल,कलकत्ता 1956, पृ.154

(22) प्रकाश चंद्र मेहता, आदिवासी विकास एवं प्रथाएं, पृ.9

(23) डॉ.विजय कुमार तिवारी, छत्तीसगढ़ की जनजातियाँ, हिमालया पब्लिशिंग हाऊस प्रथम संस्करण 2001, पृ.39

(24) विजय शंकर उपाध्याय, भारत की जनजातिय संस्कृति,हिन्दी ग्रंथ अकादमी संस्करण 2004, पृ.2

(25) डॉ.आर.एन श्रीवास्तव, जनजाति संस्कृति,म.प्र.हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण, पृ.4

(26) डॉ. शिव कुमार तिवारी, मध्यप्रदेश के आदिवासी,हिन्दी ग्रंथ अकादमी, प्रथम संस्करण 1984, पृ.2

(27) डॉ.विजय कुमार तिवारी, छत्तीसगढ़ की जनजातियॉ,पूर्वोक्त पृ.30-33

(28) डॉ. शिव कुमार तिवारी, मध्यप्रदेश की जनजातीय संस्कृति,पूर्वोक्त, पृ.21

(29) डॉ. शिव कुमार तिवारी, मध्यप्रदेश के आदिवासी,पूर्वोक्त, पृ.301

(30) डब्ल्यू वी.ग्रिगसन, द मारिया गोंड ऑफ बस्तर,आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस लंदन, 1938 पृ.20-25

(31) विजय शंकर उपाध्याय, भारत की जनजातिय संस्कृति,पूर्वोक्त, पृ.76–79

(32) एस.पी.भट्ट, एवं टी.के.वैष्णव, हल्बा जनजाति का मानव शास्त्रीय अध्ययन, पृ.104–10

(33) एल्विन वी, द मुरिया एण्ड देयर घोटुल,आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस बंबई 1943, पृ.75

(34) डॉ. शिव कुमार तिवारी, पूर्वोक्त, पृ.253

(35) ए.सी.राय, द उराव ऑफ नागपुर देयर हिस्ट्री इकोनामी लाईफ एण्ड सोशियल ऑरगेनाइजेशन पृ.95-100

(36) ए.सी.दूबे, दि कमार इथनोग्राफिक एण्ड फोक कल्चर, पृ.4-5

(37) यू.पी.सिंग, द कोरबा, (ए वानिसंग ट्राइव) ए स्टडी इन देयर सोसायटि एण्ड इकानामी, मेन इन इंडिया, वाल्यूम 25 नं. 4,1999

(38) अबनिंदर नारायण, द कोरबा ट्राइब,देयर सोसायटी एण्ड इकोनामिक्स, अमर प्रकाशन, दिल्ली 1990, पृ.62

(39) एस.के.लाल, सोशियो इकानामी स्टडी आफ द ट्रायबल फार्मर,बुलेटिन ऑफ टी.आर.डी.आई भोपाल, वाल्यूम 12, न.2, 1984, पृ.24-28

(40) पारूल जोशी, पताल कोट की भारिया जनजाति में स्त्रियों की स्थिति एवं भूमिका,बुलेटिन ऑफ द ट्राइवल रिसर्च एण्ड डेवलपमेंट इन्सीटीटयूट भोपाल वाल्यूम 21, 1993, पृ.31-34

(41) एल्विन वी, द बैगा, जान मुरे लंदन 1939, पृ.54

(42) आर.वी.रसेल एण्ड हीरालाल, ट्राइब्स एण्ड कास्टस आफ सेंट्रल प्रोविन्सेस आफ इंडिया, राजधानी बुक सेंटर दिल्ली, 1975, पृ.86-90

(43) एल.पी.विद्यार्थि एण्ड बी.के.राय, दि ट्राइबल कल्चर ऑफ इंडिया,कान्सेप्ट पब्लिकेशन हाऊस नई दिल्ली, पृ.10

(44) आर.वी.रसेल एण्ड हीरालाल, पूर्वोक्त, पृ.102-105

(45) एस.के.तिवारी, मध्यप्रदेश के आदिवासी, पृ.239

(46) एल.पी.विद्यार्थि एण्ड बी.के.राय, पूर्वोक्त पृ.25-30

(47) जी.पी.पटेल, ग्रामीण एण्ड आदिवासी महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक समस्याएँ एवं समाधान मध्यप्रदेश के संदर्भ में, पृ. 20–27

(48) शिव कुमार तिवारी, मध्यप्रदेश के आदिवासी,पूर्वोक्त, पृ.241

(49) ए.के.डांडा, इकोनामि ट्रांसफारमेशन इन ट्राइवल इंडिया,पब्लिकेशन नई दिल्ली, 1984, पृ.30-40

(50) पी.आर.टी.गर्डन, एसफयूक, दि गोंड एण्ड भूमिया ऑफ ईस्टन मण्डला, पृ.107

(51) आर.वी.रसेल एण्ड हीरालाल पूर्वोक्त, पृ.81-86

(52) के.एन.थुस्सु, द ध्रुवा ऑफ बस्तर,एंथ्रोपोलिजिकल सर्वे ऑफ इंडिया कलकत्ता 1968, पृ.15-20

(53) ए.सी.राय, एण्ड आर.सी.राय, द खारिया,मेन इन इंडिया 2, 1937, पृ.93-98

(54) एल्विन वी., द अगरिया,आक्सफोर्ड यूनिर्वसिटी प्रेस लंदन 1942, पृ.46-50

(55) एल्विन वी., सवरा फिचुरिस मेन इन इंडिया अंक 25, 1945, पृ.254

(56) एच.के.रक्षित, द डोरला एण्ड ध्रुवा ऑफ बस्तर,ए डीमोग्राफी प्रोफाइल जर्नल ऑफ इंडिया,एनथ्रो सोसायटी, वाल्यूम 7, 1972, पृ.115-128

(57) डॉ विजय कुमार तिवारी, मध्यप्रदेश के आदिवासी,पूर्वोक्त, पृ.255

(58) डब्ल्यू वी.गिगसन, द मारिया गोंड ऑफ बस्तर,आक्सफोर्ड यूनिर्वसिटी प्रेस लंदन 1938, पृ.104

(59) विजय शंकर उपाध्याय, भारत की जनजातिय संस्कृति, पूर्वोक्त,पृ.76-79

(60) डॉ.आर.एन.श्रीवास्तव, जनजातिय संस्कृति,पूर्वोक्त, पृ.110

(61) शिव कुमार तिवारी, पूर्वोक्त, पृ.97

(62) पूर्वोक्त

(63) डॉ.तृषा शर्मा, छत्तीसगढ़ इतिहास संस्कृति एवं परंपरा,छ.ग.शोध संस्थान रायपुर, 2003, पृ.26

(64) शुक्ल हीरालाल, छत्तीसगढ़ ज्ञान कोष,छत्तीसगढ़ हिन्दी ग्रंथ अकादमी,2003, पृ.235

(65) पूर्वोक्त

(66) एस.डी.मौर्य सामाजिक भूगोल, पृ.524

(67) प्रदीप श्रीवास्तव, भारत का जनजाति जीवन,पूर्वोक्त, पृ.225

(68) डॉ. किरण गजपाल, छत्तीसगढ़ का भूगोल,वैभव प्रकाशन पुरानीबस्ती रायपुर, प्रथम संस्करण 2006, पृ.183

(69) एल.पी.विद्यार्थी, ट्राइवल कल्चर ऑफ इंडिया,पूर्वोक्त, पृ.29

(70) ए.सी.सिन्हा, ए संथाल विलेज, पृ.53

(71) एस.आर.एन.श्रीवास्तव, दि ट्राइवर एनकाउंटर इण्डर्स्ट्रिज दंडामी मारिया ऑफ साउथ बस्तर,पृ.108

(72) एस.सी.दूबे, दि कमार,पूर्वोक्त, पृ.130

(73) डॉ.आर.एन.श्रीवास्तव, पूर्वोक्त, पृ.10

(74) विजय शंकर उपाध्याय, पूर्वोक्त, पृ.76-79

(75) विलियम,बी.ग्रिगसन, दि मारिया गोण्ड ऑफ बस्तर,पूर्वोक्त, पृ.40-45

(76) एफ.जी.बेली, कास्ट एण्ड इकोनॉमिक फंटीयर लंदन, पृ.31

(77) वेरियर एल्विन, दि बैगा,पूर्वोक्त, पृ.78

(78) विलियम बी.ग्रिगसन, दि मारिया गोण्ड ऑफ बस्तर,पूर्वोक्त, पृ.38-39

(79) हीरालाल और रसेल, पूर्वोक्त, पृ.16

(80) पूर्वोक्त

(81) आर.एन.श्रीवास्त, पूर्वोक्त, पृ.53

(82) भगवान सिंह वर्मा, छत्तीसगढ़ का इतिहास,पूर्वोक्त, पृ.213

(83) डॉ. अरविंद शर्मा, छत्तीसगढ़ का राजनैतिक इतिहास,पूर्वोक्त, पृ.16

(84) भगवान सिंह वर्मा, पूर्वोक्त, पृ.214

(85) जे.आर.वाल्यानी, व्ही.डी.साहसी, छत्तीसगढ़ का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास,पूर्वोक्त, पृ.235

(86) डॉ.अरविंद शर्मा, पूर्वोक्त, पृ.17

(87) शांता शुक्ला, छत्तीसगढ़ का सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक इतिहास,पूर्वोक्त, पृ.151

(88) प्यारे लाल गुप्त, प्राचीन छत्तीसगढ़,पूर्वोक्त, पृ.210

(89) भगवान सिंह वर्मा, पूर्वोक्त, पृ.217

(90) जे.आर.वााल्यानी, व्ही.डी.साहसी, पूर्वोक्त,पृ.240

(91) शांता शुक्ला, पूर्वोक्त, पृ.159

(92) भगवान सिंह वर्मा, पूर्वोक्त, पृ.225

(93) अरविंद शर्मा, पूर्वोक्त, पृ.18

(94) पूर्वोक्त

(95) शांता शुक्ला, पूर्वोक्त, पृ.149

--००--